नये राज्यों का उदय और उनकी वर्तमान स्थिति–उत्तराखण्ड के विशेष सन्दर्भ में

डॉ0 सुल्तान सिंह यादव,
राजनीति विज्ञान,
असिस्टैण्ट प्रोफेसर,
राजकीय महाविद्यालय टनकपुर चम्पावत

शोध–सार

किसी भी राज्य को चलाने के लिए विकास का सही मॉडल होना चाहिए। नये राज्यों का गठन करना कोई उपलब्धि नहीं हैं। राज्य का गठन राजनीतिक दबावों व महत्वकांक्षाओं को लेकर नही होना चाहिए। राज्य गठन से पहले उसकी पूर्ण तैयारी हो तथा राज्य के विकास का खाका तैयार किया जाना चाहिए। गठित होने वाले राज्य की आय के स्त्रोतों व संसाधनों पर गम्भीर अध्ययन किया जाना आवश्यक है। राज्य बनाने से पहले इस बात पर चर्चा की जानी चाहिए कि जिस मूल राज्य से वह अलग हो रहा है।अपने स्वरूप में आने के बाद दोनों के बीच किस तरह के परिवर्तन आ सकते है, किन चीजों को लेकर संकट की स्थिति आ सकती है, इन सभी बिन्दुओं पर यदि गठन से पूर्व चर्चा नहीं की गयी तो नये राज्य विकास की राह ताकते रह जायेंगे। उ0प्र0 और उत्तराखण्ड आज भी कई सम्पत्तियों के बटबारे को लेकर आमने–सामने हैं। दो दशक बीत जाने के बाद भी राज्य अपनी क्षेत्रीय समस्याओं पर नियंत्रण नही कर पाया है। उत्तराखण्ड राज्य का गठन एक आन्दोलन की परिणिति था। इसके लिए किसी प्रकार की तैयारी नहीं की गई थी। विकास का न कोई माडॅल तैयार किया न रोडमैप । यही कारण है कि आज भी उत्तराखण्ड बहुत मजबुत स्थिति में नहीं है।

किसी भी राज्य को चलाने के लिए विकास का सही मॉडल होना चाहिए। नये राज्यों का गठन करना कोई उपलब्धि नहीं हैं। राज्य का गठन राजनीतिक दबावों व महत्वकांक्षाओं को लेकर नही होना चाहिए।राज्य गठन से पहले उसकी पूर्ण तैयारी हो तथा राज्य के विकास का खाका तैयार किया जाना चाहिए। गठित होने वाले राज्य की आय के स्त्रोतों व संसाधनों पर गम्भीर अध्ययन किया जाना आवश्यक है। राज्य बनाने से पहले इस बात पर चर्चा की जानी चाहिए कि जिस मूल राज्य से वह अलग हो रहा है। अपने स्वरूप में आने के बाद दोनों के बीच किस तरह के परिवर्तन आ सकते है, किन चीजों को लेकर संकट की स्थिति आ सकती है, इन सभी बिन्दुओं पर यदि गठन से पूर्व चर्चा नहीं की गयी तो नये राज्य विकास की राह ताकते रह जायेंगे।

उ0प्र0 और उत्तराखण्ड आज भी कई सम्पत्तियों के बटबारे को लेकर आमने–सामने हैं। दोदशक बीत जाने के बाद भी राज्य अपनी क्षेत्रीय समस्याओं पर नियंत्रण नही कर पाया है। उत्तराखण्ड राज्य का गठन एक आन्दोलन की परिणिति था। इसके लिए किसी प्रकार की तैयारी नहीं की गई थी। विकास का न कोई माडॅल तैयार किया न रोडमैप।यही कारण है कि आज भी उत्तराखण्ड बहुत मजबुत स्थिति में नहीं है।

उत्तराखण्ड में सबसे बड़ी समस्या है रोजगार की, जो राज्य के गठन के बाद भी बरकरार है।

रोजगार की तलाश मुं दिल्ली व बड़े शहरों में पलायन करने की प्रतिशत पूर्व की भांति बना हुआ है। सरकारें बिना किसी विकास के खाके खीचें चल रही है। सिडकुल के नाम पर सरकार ने बडें पैमाने पर कृषि जमीन बेंच दी है। राज्य के युवायों को रोजगार के नाम पर संघर्ष करना पड़ रहा है। बडी कम्पनियों में भी स्थानीय बेरोजगारों को मौका नही मिल पाया है। राजनीतिक स्थिरता का अभाव उत्तराखण्ड में भी व्याप्त है। विकास का मॉडल आज भी उत्तराखण्ड की सरकारें तय नही कर पायी है।

राज्य का पंचायती राज्य एक्ट अभी तक अपना पूर्ण आकार नही ले पाया है। परिसीमन को लेकर आम जनता संतुष्ट नही है। ये माना जा रहा है कि नये परिसीतन के आधार पर पहाडी क्षेत्रों के नौ विधान – सभा क्षेत्र समाप्त हो रहे है। नये परिसीमन में पर्वतीय जनपदों की छः सीटों को कम कर दिया गया है। जिनमें जिला चमोली से एक सीट, नन्दप्रयाग,पौडी गढवाल से दो सीट, धमाकोट वोरोवाला , पिथैरागढ से एक सीट, कांडा, अल्मोडा से एक सीट, भिक्यासैण को कम कर दिया गया है। इन सीटों को मैदानी भागों सें जोडा गया है। देहरादून से एक सीट, हरिद्वार से दो, नैनीताल से एक व उधम सिहं नगर से दो सीटों को जोडा गया है। परिसीमन का यह आधार उत्तराखण्ड के पर्वतीय राज्य होने पर शंका पैदा करता है। राज्य के सरकारी आंकडों के अनुसार राज्य निरन्तर विकास कर रहा है। उत्तर प्रदेश से अलग होने के आंकडें है कि राज्य की प्रति व्यक्ति आय दो गुनी हो गयी है। उत्तराखण्ड के साथ ही बने झारखण्ड व छत्तीसगढ राज्यों में भी प्रति व्यक्ति आय की बढोत्तरी के आंकडें दिखा रहे है। बिहार में प्रति व्यक्ति आय 10.570 रूपया है। जबकि झारखण्ड में यह आँकडाँ 20177 है। छत्तीसगढ में प्रति व्यक्ति आय 29000 रूपये है जबकि मध्य प्रदेश में औसत आय 18051 है। ये आंकडे आम आदमी की मजबूती को भले ही दर्शा रहे हो पर बटवारे के बाद जनसंख्या में आयी औसत कमी को भी नकारा नही जा सकता है। सरकारें किसी नये फार्मुलें पर काम नहीं कर रहीं हैं

आम आदमी को अपनें अधिकारों व हक को पाने के लिये मशक्कत करनी पर रहीं हैं उसके सपनों का राज्य उसे अभी भी नहीं मिल पाया हैं जो भी योजनायें बनाई जा रहीं हैं उन पर पूर्व चिन्तन नहीं किया जा रहा है। जिसके चलते ये योजनाएँ कार्यक्षेत्र में असफल हो रही है। उत्तराखण्ड राज्य को भी घोटालों का घुन लग गया है। आम जनता स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़क, बिजली, पानी जैसे बुनियादी आवश्यकताओं के लिए तरस रही है। उत्तराखण्ड राज्य ऊर्जा प्रदेश कहा जा रहा है। जबकि राज्य ऊर्जा विहीन होता जा रहा है। राज्य की आर्थिक स्थिति चिंताजनक है। जिसका मुख्य कारण है राज्य बनने से पहले इस पर ग्रहकार्य नहीं किया गया। यहीं कारण है कि राज्य के पास अपने ऐसे संसाधन बहुत कम है जिनसे वह अपने लिए आय पैदा कर सकें। पंजाब से अलग हुए हरियाणा और उत्तर प्रदेश से अलग हुए उत्तराखण्ड को आर्थिक मदद् के लिए हमेशा केन्द्र का मुँह तांकना पड़ता है। केन्द्र की मदद को मुद्दा बना कर प्रदेश की सरकारे जनता के बीच जा रही है। जबकि मुद्दा उन तकनीकों को खोजने का होना चाहिए, जिससे राज्य अपनी आय बढ़ा सके और हर कार्य में उसे केन्द्र का मुहं न देखना पडें। आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्थाए क्या हो ,इस पर कोई चर्चा न सरकारें कर रही हैं, न जनहित के कार्यों में लगे संगठन। ऐसी स्थितियों में छोटे राज्य सफल हो पायेगें कहना कठिन होगा।

छोटे राज्यों के गठन को लेकर देश में मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सभी राज्य नकारात्मक सोच को लेकर मॉगे जा रहे हैं।

हरित प्रदेश की मांग केवल इसलिए उठ रही है कि भारी राजस्व उठाने के बाद भी पश्चिमी उत्तर प्रदेश को बुन्देलखण्ड व पूर्वांचल की समस्याओं का साझा बोझ उठाना पड़ रहा है। गोरखालैण्ड के लोगों ने घोषणा की है कि गोरखालैण्ड में बसने वाले लोग बंगाली नहीं होंगे। ऐसे तर्कों के आधार पर गठित राज्य राष्ट्रीय एकता को कितना बल दे पायेंगे ये सोचनीय है। प्रश्न यह है कि छोटे–छोटे हितों को लेकर राज्य का गठन होना चाहिए? क्या गठन से पूर्व राज्य की आर्थिक स्थितियों पर चिन्ता नहीं की जानी चाहिए? क्या गौरखालैण्ड चाय और पर्यटन से राज्य के खर्चे चला लेगा? उत्तराखण्ड में पर्यटन की आपार सम्भावनाओं ने क्या राज्य को मजबूत आर्थिक स्थिति दी है?क्या बुन्देलखण्ड व पूर्वाचल अपना पेट भरने में सक्षम है? इन सभी सवालों से पहले सभी संगठनों, बुद्धिजीवियों को इस बात पर चर्चा करनी चाहिए कि राज्य के विकास का खाका क्या हो? विकास की रणनीति तय होनी चाहिए ऐसा न करने पर उत्तराखण्ड, झारखण्ड व छत्तीगढ़ जैसे राज्य बनेंगे, जो गठन के वर्षों बाद भी केन्द्र पर निर्भर रहेंगे। राज्यों के छोटे या बड़े होने से फर्क नहीं पड़ता। सवाल यह है कि विकास का खाका क्या हो? अमेरिका में 50 राज्य हैं जबकि आबादी भारत से कम है। सही गवर्नेंस के लिये वहां भी नये राज्यों के गठन की तैयारी चल रही है। लेकिन पूरे अध्ययन एवं शोधों के बाद। बिना शोर–शराबों व हड़तालों के । यह सही है कि विकास के मॉडल में छोटे राज्य ही फिट है, लेकिन उनके गठन का आधार सही व राष्ट्रीय व जनहित में होना चाहिए। बहुत से ऐसे राज्य थे, जिनका उद्‌गम उनकी आवश्यकता थी। जो विकास की कसौटी पर खरे भी उतरे लेकिन आज बहुत से राज्य तो राजनीति का परिणाम हैं या फिर भाषावाद, क्षेत्रवाद,धर्मवाद या जातिवाद की उपज हैं। ये राज्य बनाये तो गये लेकिन जो सोच इस राज्यों के गठन को लेकर थी उसका वीभत्स स्वरूप सामने आने लगा। यहॉ यह बात स्पष्ट है कि अगर सही सोच और सही दिशा को लेकर राज्य का गठन किया जाये तो छोटे राज्य लोकतांत्रिक संरचना में सबसे सटीक फिट हो सकते हैं। इस सम्बन्ध में डॉ0 रसीउद्‌दीन खान ने अपने एक निबन्ध में लिखा है कि अलग राज्य की मांग को संघों के लिये खतरा नहीं समझना चाहिए। ये अलगाव की स्थिति नहीं है बल्कि इसका उद्‌देश्य उस क्षेत्र के लोगों को बेहतर मौका देना है। भारत में इस तरह की मांगे विकास में आवेग का कार्य करती है। छोटे राज्यों की आवश्यकता इसलिये भी बढ़ जाती है क्योंकि इनके अपने अस्तित्व में आ जाने से वहां जो संसाधन हैं उन पर उनका अपना अधिकार रहता है। विकास की सम्भावनाएं प्रबल हो जाती है। क्षेत्रीय संस्कृति का विकास होता है। जातीय व क्षेत्रीय संघर्षों में कमी आती है। योजनाऐं लाभ के कार्यक्रमों का आसानी के साथ संचालन किया जा सकता है, सामाजिक समानता का विकास होता है। देश को विकास की ओर ले जाने में भागीरथी बढ़ जाती है। अब अगर इसके दूसरे पहलू पर ध्यान दे ंतो हम पाते हैं कि सभी स्थितियों में छोटे राज्य सफल नहीं है। छोटे राज्यों का गठन वांछनीय है पर जो विरोध राज्यों में हैं वो विरोध उसी तरह से बने रहते हैं और कभी–कभी ये विरोध राष्ट्रीय स्तर पर समस्या को भी उत्पन्न कर देते हैं। अन्तर्राज्यीय संघर्ष इसका एक उदाहरण है। असम और नागालैण्ड के बीच सीमा विवाद, मध्य प्रदेश, गुजरात व राजस्थान के बीच नर्मदा विवाद तमिलनाडु, आध्र प्रदेश व कर्नाटक के बीच कावेरी विवाद ये सभी राज्यों की ज्वलंत समस्याएं हैं। जिनमें राज्य एक–दूसरे के साथ संघर्षरत है। दूसरी तरफ कई राज्यों में स्वशासन की मांग अलगाववाद को जन्म दे रही है। पंजाब में खालिस्तान की मांग क्या है? केन्द्र व राज्यों के बीच तनाव लगातार बढ़ता जा रहा है। संकुचित मानसिकता धर्मनिरपेक्षता को खतरा पैदा कराने में सहायक हो रही है। फिलहाल छोटे राज्य लोकतंत्र में कितना सफल हो सकते है। ये

एक प्रयोग और बहस का विषय है, जो रोचक भी है। राज्य बने लेकिन राजनीति और स्वार्थ की नींव पर नहीं। विनाश की नहीं विकास की शर्त पर बने। छोटे राज्यों का गठन तभी होना चाहिए जब उसका आधार तर्कसंगत हो।

संदर्भ

1. आर.सी.अग्रवाल, एस चन्द एण्ड कम्पनी लि0, रामनगर नई दिल्ली–1990
2. डॉ0 आर0एन0 शर्मा, डॉ0 आर0एन0 शर्मा एटलांटिक पब्लिशर्स नई दिल्ली–1996
3. जनपक्ष आजकल– हिन्दी पाक्षिक देहरादून, 15 सितम्बर 2008।
4. उत्तर उजाला– प्रकाशन उत्तर उजाला प्रेस हल्द्वानी, नैनीताल, 10 जनवरी 2005।
5. उत्तराखण्ड दर्पण–जगदम्बा पब्लिकेशन, 13 जुलाई 2007।
6. अमर उजाला –08 दिसम्बर 2005, पृष्ठ 12
7. शक्ति प्रसाद सकलानी, उत्तराखण्ड का इतिहास, अमिता प्रिटर्स एण्ड पब्लिशर्स, काठ गोदाम, नैनीताल, 2004
8. सत्य प्रसाद सकलानी, उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास, अमिता प्रिटर्स एण्ड पब्लिशर्स, काठ गोदाम, नैनीताल, 2004
9. शिवप्रसाद डबराल, उत्तराखण्ड का इतिहास, भाग–8, पृ0
10. मंगलम्– शोध पत्रिका, इलाहाबाद, वर्ष–02, नं0–002, भाग–03, अगस्त 2011
11. लोहिया शोध मंच, बरेली मार्च वर्ष–2015,